The Infinite
An International Peer Reviewed / Refereed Journal of Multidisciplinary Research

An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 3 | Issue 2 | February 2026
ISSN: 3048-9539 (Online)
Website: www.theinfinite.co.in

भारतीय वाङ्मय में लक्ष्मी का स्वरूप : समृद्धि, धर्म और सांस्कृतिक चेतना का प्रतीकात्मक विश्लेषण

दीपक कुमार मिश्र

शोधार्थी (जेआरएफ), इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग

जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय, चित्रकूट, उ०प्र०

ARTICLE DETAILS

Research Paper

मुख्य बिंदुः

लक्ष्मी, भारतीय वाङ्मय, समृद्धि, धर्म, सांस्कृतिक चेतना ।

सार

भारतीय वाङ्मय में 'लक्ष्मी' की संकल्पना केवल भौतिक ऐश्वर्य अथवा धनसम्पदा की अधिष्ठात्री देवी के रूप में सीमित नहीं है, अपितु वह धर्माधारित समृद्धि, सांस्कृतिक चेतना, नैतिक संतुलन तथा लोककल्याण की व्यापक दार्शनिक अवधारणा का प्रतिनिधित्व करती है। वैदिक साहित्य से लेकर उपनिषद, महाकाव्य तथा पुराणपरम्परा तक लक्ष्मी का स्वरूप निरन्तर विकासमान रूप में परिलक्षित होता है, जहाँ 'श्री' एवं 'लक्ष्मी' जीवन की मंगलमयी ऊर्जा, पोषणशक्ति तथा सामाजिक समन्वय के प्रतीक के रूप में प्रतिष्ठित हैं। भारतीय चिंतन परम्परा में समृद्धि को धर्म से पृथक स्वीकार नहीं किया गया, अपितु धर्मसंयमित अर्थ को ही वास्तविक लक्ष्मी माना गया है। प्रस्तुत शोध का उद्देश्य भारतीय वाङ्मय में लक्ष्मी की प्रतीकात्मक सत्ता का विश्लेषण करना है, जिसके माध्यम से यह प्रतिपादित किया गया है कि लक्ष्मी भारतीय संस्कृति में आर्थिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक समृद्धि के समन्वित आदर्श का द्योतक है।

प्रस्तावना

भारतीय दार्शनिक परम्परा मानव जीवन को पुरुषार्थ-चतुष्टय— धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष— के संतुलित समन्वय पर आधारित मानती है। इनमें 'अर्थ' की प्राप्ति को जीवन-निर्वाह तथा सामाजिक स्थिरता के लिए अनिवार्य स्वीकार किया गया है, किन्तु उसकी साधना धर्म के नियंत्रण में ही उचित मानी गई है। इसी कारण भारतीय वाङ्मय में समृद्धि की अवधारणा को दैवी स्वरूप प्रदान करते हुए 'लक्ष्मी' के रूप में व्यक्त किया गया। लक्ष्मी केवल संपत्ति की प्रतीक नहीं, बल्कि जीवन में संतुलन, सदाचार, सौन्दर्य, शील तथा समन्वित उन्नति की अधिष्ठात्री शक्ति मानी गई है। संस्कृत धातु 'लक्ष्' से निर्मित 'लक्ष्मी' शब्द का अभिप्राय लक्ष्य, चिन्ह अथवा प्रकाश से है, जिससे स्पष्ट होता है कि लक्ष्मी वह शक्ति है जो जीवन को दिशा, उद्देश्य तथा उत्कर्ष प्रदान करती है। प्रारम्भिक वैदिक साहित्य में 'श्री' शब्द का प्रयोग अधिक प्रचलित था, जो तेज, वैभव, सौभाग्य एवं कल्याण का द्योतक

था। उत्तरवैदिक काल में यही 'श्री' क्रमशः सगुण देवी-स्वरूप में विकसित होकर लक्ष्मी के रूप में प्रतिष्ठित हुई। भारतीय मनीषा ने धन को स्वयंसिद्ध मूल्य न मानकर उसे नैतिक उत्तरदायित्व से सम्बद्ध किया, अतः लक्ष्मी की उपासना वस्तुतः धर्मसम्मत समृद्धि की साधना का प्रतीक है।

भारतीय वाङ्मय की अवधारणा एवं उसका दार्शनिक आधार

'वाङ्मय' शब्द भारतीय ज्ञानपरम्परा की उस समग्र बौद्धिक धरोहर का द्योतक है, जो वाणी अथवा शब्द के माध्यम से अभिव्यक्त हुई है। भारतीय वाङ्मय केवल साहित्यिक अभिव्यक्ति न होकर सांस्कृतिक स्मृति, दार्शनिक चिंतन तथा सामाजिक मूल्यव्यवस्था का संवाहक है। वैदिक संहिताएँ, ब्राह्मण ग्रंथ, आरण्यक, उपनिषद, महाकाव्य, पुराण, धर्मशास्त्र तथा आगमिक परम्पराएँ इस वाङ्मय की निरन्तर प्रवहमान धारा का निर्माण करती हैं। इन ग्रंथों में जीवन के भौतिक तथा आध्यात्मिक आयामों का समन्वित विवेचन किया गया है। लक्ष्मी की संकल्पना इसी व्यापक वाङ्मयीय चेतना के भीतर विकसित होती है, जहाँ समृद्धि को केवल आर्थिक उपलब्धि के रूप में नहीं, बल्कि सामाजिक संतुलन, नैतिक अनुशासन तथा सांस्कृतिक उत्कर्ष के रूप में देखा गया है। भारतीय परम्परा में ज्ञान, धर्म और समृद्धि परस्पर विरोधी न होकर एक-दूसरे के पूरक माने गए हैं, और लक्ष्मी इस समन्वय की प्रतीक बनकर उभरती है।

वैदिक वाङ्मय में लक्ष्मी का प्रारम्भिक स्वरूप

भारतीय वाङ्मय में लक्ष्मी की अवधारणा का प्राचीनतम स्वरूप वैदिक साहित्य में प्राप्त होता है। यद्यपि ऋग्वेद के मूल मंत्रों में 'लक्ष्मी' शब्द का प्रयोग सीमित है, तथापि 'श्री' की संकल्पना अत्यन्त विकसित रूप में विद्यमान है। 'श्रीसूक्त', जिसे ऋग्वैदिक परम्परा का अंग माना जाता है, लक्ष्मी-तत्त्व की सर्वाधिक प्राचीन एवं प्रमाणिक अभिव्यक्ति प्रस्तुत करता है। श्रीसूक्त में लक्ष्मी को हिरण्यवर्णा, चन्द्रप्रभा तथा जीवन-पोषण की अधिष्ठात्री शक्ति के रूप में संबोधित किया गया है। मंत्र— "हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम्, चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह"— में लक्ष्मी का स्वरूप केवल धनप्रदाता देवी के रूप में नहीं, बल्कि प्रकाश, उर्वरता एवं जीवनवर्धन की दैवी शक्ति के रूप में चित्रित हुआ है। यहाँ समृद्धि का अर्थ कृषि-संपन्नता, पशुधन, अन्न, संतति तथा सामाजिक प्रतिष्ठा से है, जिससे स्पष्ट होता है कि वैदिक समाज में लक्ष्मी जीवन की समग्र उन्नति की प्रतीक थी।

वैदिक ऋषियों ने समृद्धि को नैतिक अनुशासन से अभिन्न रूप में सम्बद्ध किया। यज्ञ, दान, श्रम तथा सत्यपालन को लक्ष्मी की प्राप्ति का आधार माना गया। अथर्ववेद में 'अलक्ष्मी' का उल्लेख दरिद्रता, कलह एवं अव्यवस्था के रूप में किया गया है, जो यह संकेत करता है कि लक्ष्मी केवल संपदा नहीं, बल्कि सामंजस्यपूर्ण सामाजिक व्यवस्था का द्योतक है। इस प्रकार वैदिक चिंतन में लक्ष्मी धर्माधारित समृद्धि की सजीव अभिव्यक्ति है।

ब्राह्मण एवं आरण्यक साहित्य में लक्ष्मी की अवधारणा

उत्तरवैदिक काल में ब्राह्मण ग्रंथों के माध्यम से लक्ष्मी की संकल्पना अधिक सामाजिक एवं राजनैतिक आयाम ग्रहण करती है। शतपथ ब्राह्मण में 'श्री' को यज्ञीय कर्मफल तथा राजसत्ता की वैधता से सम्बद्ध किया गया है। यहाँ यह विचार प्रतिपादित होता है

कि धर्मसम्मत शासन एवं यज्ञपरायण जीवन से ही 'श्री' की प्राप्ति संभव है। इस काल में लक्ष्मी का सम्बन्ध 'राजलक्ष्मी' की धारणा से स्थापित हुआ, जिसके अनुसार राज्य की समृद्धि शासक के धर्मपालन पर निर्भर मानी गई। इस प्रकार लक्ष्मी केवल व्यक्तिगत सम्पन्नता का प्रतीक न रहकर सामूहिक कल्याण तथा सामाजिक स्थिरता की सूचक बन जाती है।

आरण्यक साहित्य में बाह्य अनुष्ठान की अपेक्षा आन्तरिक साधना को महत्त्व प्रदान किया गया, जिसके परिणामस्वरूप लक्ष्मी की अवधारणा भी अधिक आध्यात्मिक रूप ग्रहण करती है। समृद्धि का वास्तविक स्वरूप आत्मसंयम, ज्ञान तथा संतुलित जीवन में निहित माना गया।

उपनिषदों में लक्ष्मी का दार्शनिक रूपांतरण

उपनिषदिक वाङ्मय में लक्ष्मी की संकल्पना प्रत्यक्ष देवी-स्वरूप से ऊपर उठकर दार्शनिक अर्थ ग्रहण करती है। तैत्तिरीय उपनिषद में 'अन्नं ब्रह्म' की उद्घोषणा जीवन-पोषण की उस सार्वभौमिक शक्ति की ओर संकेत करती है, जिसे व्यापक अर्थ में लक्ष्मी-तत्त्व कहा जा सकता है। अन्न, ऊर्जा तथा पोषण को अस्तित्व का आधार स्वीकार करते हुए उपनिषद यह प्रतिपादित करते हैं कि समृद्धि का मूल तत्व जीवन-धारण की क्षमता में निहित है। यहाँ लक्ष्मी बाह्य वैभव से अधिक आन्तरिक संतोष एवं अस्तित्वगत पूर्णता की प्रतीक बन जाती है। इस प्रकार उपनिषदिक चिंतन समृद्धि के आध्यात्मिकीकरण की दिशा में अग्रसर होता है, जहाँ भौतिक उपलब्धि का अंतिम उद्देश्य आत्मकल्याण माना गया है।

वैदिक, ब्राह्मण तथा उपनिषदिक वाङ्मय के सम्यक अध्ययन से यह निष्कर्ष प्रतिपादित होता है कि भारतीय परम्परा में लक्ष्मी का मूल स्वरूप धनकेंद्रित न होकर धर्माधिष्ठित समृद्धि का दार्शनिक प्रतीक है। लक्ष्मी जीवन की उस संतुलित अवस्था का प्रतिनिधित्व करती है जिसमें भौतिक सम्पन्नता, नैतिक अनुशासन तथा आध्यात्मिक चेतना का समन्वय विद्यमान रहता है। भारतीय वाङ्मय ने समृद्धि को लोकमंगल से सम्बद्ध करते हुए लक्ष्मी को सांस्कृतिक चेतना की आधारशक्ति के रूप में प्रतिष्ठित किया है।

वैदिक एवं उपनिषदिक काल के पश्चात भारतीय वाङ्मय में लक्ष्मी की अवधारणा महाकाव्यकाल में अधिक सजीव, मानवीय तथा सांस्कृतिक रूप ग्रहण करती है। रामायण एवं महाभारत जैसे महाकाव्यों में लक्ष्मी का स्वरूप केवल दैवी सत्ता के रूप में नहीं, अपितु धर्मनिष्ठ जीवन, आदर्श शासन तथा नैतिक आचरण के साथ अविच्छिन्न रूप से सम्बद्ध दिखाई देता है। इस काल में लक्ष्मी का सम्बन्ध विशेष रूप से 'धर्माधारित सत्ता' तथा 'नैतिक समृद्धि' से स्थापित होता है।

वाल्मीकि रामायण में लक्ष्मी का प्रत्यक्ष उल्लेख यद्यपि सीमित है, तथापि सीता के स्वरूप में लक्ष्मी की अवधारणा पूर्णतः अभिव्यक्त होती है। सीता को पृथ्वीपुत्री, शील, त्याग, मर्यादा एवं पवित्रता की प्रतिमूर्ति के रूप में चित्रित किया गया है। भारतीय परम्परा में सीता को विष्णुपत्नी लक्ष्मी का अवतार माना गया है, जो यह संकेत करता है कि लक्ष्मी केवल ऐश्वर्य की देवी नहीं, बल्कि धर्ममूलक जीवन-संरचना की आधारशक्ति है। अयोध्या का वैभव, रामराज्य की समृद्धि तथा सामाजिक संतुलन सीता की उपस्थिति से सम्बद्ध रूप में वर्णित है। जब सीता वनगमन करती हैं, तब अयोध्या की शोभा क्षीण हो जाती है, जो प्रतीकात्मक रूप से यह दर्शाता है कि जहाँ धर्म एवं मर्यादा का अभाव होता है, वहाँ लक्ष्मी का स्थायित्व संभव नहीं रहता।

रामराज्य के वर्णनों में यह स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया गया है कि समृद्धि का आधार न्याय, सत्य एवं लोककल्याणकारी शासन है। प्रजा की संतुष्टि, आर्थिक संतुलन तथा सामाजिक शान्ति को राज्यलक्ष्मी की अभिव्यक्ति माना गया है। इस प्रकार रामायण में लक्ष्मी राजनीतिक नैतिकता तथा सांस्कृतिक आदर्श की प्रतीक बनकर उभरती है।

महाभारत में लक्ष्मी की अवधारणा और अधिक दार्शनिक गहराई प्राप्त करती है। यहाँ लक्ष्मी को चंचला कहा गया है, जिसका अभिप्राय यह है कि अधर्म, अहंकार एवं अन्याय के साथ समृद्धि स्थायी नहीं रह सकती। उद्योगपर्व एवं शांतिपर्व में यह विचार बारम्बार व्यक्त हुआ है कि लक्ष्मी धर्मनिष्ठ पुरुष के साथ ही निवास करती है। दुर्योधन के पास अपार भौतिक वैभव होने पर भी उसे स्थायी लक्ष्मी प्राप्त नहीं होती, जबकि धर्मराज युधिष्ठिर अंततः राज्यलक्ष्मी के अधिकारी बनते हैं। यह प्रस्तुति भारतीय चिंतन में नैतिक न्याय और समृद्धि के गहन सम्बन्ध को स्पष्ट करती है।

महाभारत के शांतिपर्व में भीष्म द्वारा युधिष्ठिर को दिए गए उपदेशों में यह प्रतिपादित किया गया है कि दान, संयम, सत्य एवं करुणा लक्ष्मी के स्थायित्व के आधार हैं। इस प्रकार महाकाव्यकालीन वाङ्मय में लक्ष्मी धर्म, नीति एवं राजधर्म के साथ एकीकृत हो जाती है।

पुराण साहित्य में लक्ष्मी का विकास

पुराणकाल भारतीय धार्मिक एवं सांस्कृतिक चेतना के व्यवस्थित रूपांकन का युग है, जिसमें लक्ष्मी का व्यक्त देवी-स्वरूप पूर्ण विकसित रूप में प्रतिष्ठित होता है। विष्णु पुराण, पद्म पुराण, भागवत पुराण तथा ब्रह्मवैवर्त पुराण में लक्ष्मी को विश्वपालक शक्ति तथा विष्णु की सहचरी के रूप में वर्णित किया गया है। यहाँ लक्ष्मी सृष्टि के संरक्षण एवं संतुलन की दैवी शक्ति बन जाती है।

विष्णु पुराण में लक्ष्मी को जगत् की पालनशक्ति कहा गया है, जो विष्णु के साथ मिलकर विश्वव्यवस्था का संचालन करती है। यह विचार भारतीय दर्शन में शक्ति एवं पुरुष के समन्वय की अवधारणा को व्यक्त करता है। विष्णु संरक्षण के सिद्धान्त का प्रतिनिधित्व करते हैं, जबकि लक्ष्मी उस संरक्षण को सम्भव बनाने वाली समृद्धि, ऊर्जा एवं संसाधनों की अधिष्ठात्री हैं। इस प्रकार लक्ष्मी को विश्वव्यापी संतुलन की अनिवार्य शक्ति माना गया है।

भागवत पुराण में लक्ष्मी की भक्ति एवं धर्म के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित किया गया है। वहाँ यह वर्णित है कि लक्ष्मी केवल वैभव की दात्री नहीं, बल्कि भगवद्भक्ति से उत्पन्न आन्तरिक समृद्धि की प्रतीक भी है। भक्तिमार्ग में लक्ष्मी का अर्थ आध्यात्मिक सम्पन्नता से जुड़ जाता है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि भारतीय परम्परा में समृद्धि का अंतिम लक्ष्य आत्मोन्नति है।

समुद्रमंथन एवं लक्ष्मी का प्रतीकवाद

पुराण साहित्य में वर्णित समुद्रमंथन की कथा लक्ष्मी-तत्त्व के प्रतीकात्मक विश्लेषण का अत्यन्त महत्वपूर्ण आधार प्रस्तुत करती है। देवताओं एवं असुरों द्वारा क्षीरसागर का मंथन किए जाने पर लक्ष्मी का प्राकट्य होना इस तथ्य का द्योतक है कि समृद्धि संघर्ष, श्रम तथा सामूहिक प्रयास का परिणाम होती है। समुद्र यहाँ संभावनाओं एवं संसाधनों का प्रतीक है, मंथन पुरुषार्थ का प्रतिनिधित्व करता है, और लक्ष्मी उस संतुलित प्रयास से उत्पन्न कल्याणकारी समृद्धि का रूप है।

लक्ष्मी का विष्णु को वरण करना भी गहन दार्शनिक अर्थ रखता है। यह संकेत करता है कि समृद्धि स्थिरता, संरक्षण एवं धर्मनिष्ठ व्यवस्था के साथ ही सुरक्षित रह सकती है। असंतुलित शक्ति या अधर्म के साथ लक्ष्मी का स्थायित्व संभव नहीं है। इस कथा के माध्यम से भारतीय वाङ्मय यह प्रतिपादित करता है कि समृद्धि का नैतिक नियमन अनिवार्य है।

विष्णु–लक्ष्मी सम्बन्ध का दार्शनिक अर्थ

भारतीय दार्शनिक परम्परा में विष्णु एवं लक्ष्मी का सम्बन्ध केवल दाम्पत्य प्रतीक नहीं है, बल्कि अस्तित्वगत संतुलन का रूपक है। विष्णु व्यवस्था, नियम एवं संरक्षण के प्रतीक हैं, जबकि लक्ष्मी ऊर्जा, सम्पन्नता एवं विकास की अधिष्ठात्री शक्ति हैं। जब शक्ति और व्यवस्था का समन्वय होता है, तभी समाज में स्थायी समृद्धि संभव होती है। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति में लक्ष्मी को 'श्री' कहा गया, जो सत्ता की वैधता एवं सांस्कृतिक प्रतिष्ठा का प्रतीक है।

राजाओं के राज्याभिषेक में 'श्री' की स्थापना तथा राजलक्ष्मी की कामना इस विचार को पुष्ट करती है कि शासन की सफलता आर्थिक शक्ति से नहीं, बल्कि धर्माधारित समृद्धि से सुनिश्चित होती है। लक्ष्मी यहाँ सांस्कृतिक वैधता एवं लोकस्वीकृति की द्योतक बन जाती है।

महाकाव्य एवं पुराण साहित्य के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि लक्ष्मी भारतीय वाङ्मय में केवल ऐश्वर्य की देवी नहीं, बल्कि धर्म, शासन, नैतिकता एवं सांस्कृतिक संतुलन की आधारशक्ति है। रामायण में लक्ष्मी मर्यादा एवं आदर्श जीवन की प्रतीक है, महाभारत में नैतिक न्याय की सहचरी है, तथा पुराणों में विश्वव्यापी संरक्षण एवं संतुलन की दैवी शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित है। इस प्रकार लक्ष्मी की अवधारणा भारतीय सांस्कृतिक चेतना में समृद्धि के नैतिक एवं आध्यात्मिक आयामों को अभिव्यक्त करती है।

स्मृति एवं धर्मशास्त्रीय वाङ्मय में लक्ष्मी की अवधारणा

महाकाव्य एवं पुराणकाल के उपरान्त स्मृति एवं धर्मशास्त्रीय साहित्य में लक्ष्मी की अवधारणा सामाजिक आचारव्यवस्था तथा नैतिक जीवन-पद्धति के साथ गहन रूप से सम्बद्ध हो जाती है। मनुस्मृति, याज्ञवल्क्य स्मृति तथा अन्य धर्मशास्त्रीय ग्रंथों में समृद्धि को धर्मानुकूल आचरण का स्वाभाविक परिणाम माना गया है। भारतीय धर्मशास्त्रकारों ने यह प्रतिपादित किया कि अर्थ की प्राप्ति तभी कल्याणकारी है जब वह न्याय, श्रम एवं सदाचार पर आधारित हो। अन्यायपूर्वक अर्जित संपत्ति को स्थायी लक्ष्मी नहीं माना गया, अपितु उसे विनाश का कारण कहा गया है। इस प्रकार धर्मशास्त्रीय परम्परा लक्ष्मी को नैतिक अनुशासन से नियंत्रित आर्थिक व्यवस्था का प्रतीक मानती है।

मनुस्मृति में गृहस्थाश्रम को सामाजिक संरचना का आधार स्वीकार करते हुए दान, अतिथिसत्कार तथा लोकसेवा को लक्ष्मी की स्थिरता का कारण बताया गया है। यहाँ लक्ष्मी व्यक्तिगत उपभोग की वस्तु न होकर सामाजिक उत्तरदायित्व का माध्यम बन जाती है। याज्ञवल्क्य स्मृति में भी न्यायपूर्ण शासन, करव्यवस्था तथा प्रजाहित को राज्यसमृद्धि का मूलाधार कहा गया है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि लक्ष्मी की अवधारणा व्यक्तिगत से अधिक सामुदायिक कल्याण से सम्बद्ध थी। धर्मशास्त्रीय चिंतन में यह धारणा दृढ़तापूर्वक स्थापित हुई कि जहाँ धर्म का पालन होता है, वहीं लक्ष्मी का स्थायी निवास संभव है।

भारतीय सांस्कृतिक चेतना एवं लोकपरम्परा में लक्ष्मी

भारतीय समाज में लक्ष्मी की अवधारणा केवल शास्त्रीय ग्रंथों तक सीमित नहीं रही, बल्कि लोकजीवन, उत्सवपरम्परा तथा सांस्कृतिक व्यवहार में गहराई से समाहित हो गई। भारतीय लोकमानस में लक्ष्मी को सौभाग्य, शुद्धता, श्रम एवं सद्भावना की अधिष्ठात्री देवी के रूप में स्वीकार किया गया। गृहस्वच्छता, श्रमशीलता, अतिथि-सत्कार तथा पारिवारिक सामंजस्य को लक्ष्मी आगमन के प्रतीक के रूप में देखा गया। यह धारणा भारतीय सांस्कृतिक मानस में इस विश्वास को पुष्ट करती है कि समृद्धि बाह्य साधनों से अधिक आन्तरिक अनुशासन एवं सामाजिक समन्वय से उत्पन्न होती है।

दीपावली पर्व लक्ष्मी-तत्त्व की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का सर्वाधिक महत्वपूर्ण उदाहरण है। अमावस्या की रात्रि में दीपप्रज्वलन अज्ञान एवं अव्यवस्था के अंधकार पर ज्ञान एवं समृद्धि के प्रकाश की विजय का प्रतीक है। लक्ष्मी पूजन की परम्परा केवल धनलाभ की कामना नहीं, बल्कि जीवन में पवित्रता, परिश्रम एवं नैतिक समृद्धि की स्थापना का सांस्कृतिक अनुष्ठान है। व्यापारिक समुदाय द्वारा इस अवसर पर नवीन लेखा-वर्ष का आरम्भ किया जाना यह दर्शाता है कि आर्थिक क्रिया भी धार्मिक एवं नैतिक चेतना से जुड़ी हुई थी। इस प्रकार लक्ष्मी भारतीय संस्कृति में आर्थिक गतिविधि और आध्यात्मिक मूल्य के समन्वय का माध्यम बनती है।

भारतीय कला, स्थापत्य एवं साहित्य में भी लक्ष्मी की व्यापक उपस्थिति दृष्टिगोचर होती है। गजलक्ष्मी, पद्मलक्ष्मी तथा धनलक्ष्मी के रूपों में उनका चित्रण उर्वरता, सौन्दर्य एवं जीवन-विकास का प्रतीक है। मंदिर स्थापत्य में प्रवेशद्वार पर लक्ष्मी की प्रतिमा का अंकन यह संकेत करता है कि समृद्धि और पवित्रता का संबंध अभिन्न है।

दार्शनिक एवं सांस्कृतिक प्रतीक के रूप में लक्ष्मी

भारतीय चिंतन में लक्ष्मी का स्वरूप बहुआयामी प्रतीकवाद से युक्त है। कमल पर विराजमान लक्ष्मी की कल्पना यह दर्शाती है कि समृद्धि को संसार में रहते हुए भी आसक्ति से मुक्त रहना चाहिए, क्योंकि कमल जल में स्थित होकर भी उससे अलिप्त रहता है। लक्ष्मी के हस्तों से प्रवाहित स्वर्णधारा केवल भौतिक संपन्नता का संकेत नहीं, बल्कि संसाधनों के सतत प्रवाह एवं लोकवितरण का प्रतीक है। हाथियों द्वारा अभिषेक का दृश्य राजकीय वैभव एवं प्राकृतिक सम्पन्नता के संतुलन को व्यक्त करता है। इस प्रकार लक्ष्मी की प्रतिमा भारतीय सांस्कृतिक दर्शन का दृश्य रूपक बन जाती है।

भारतीय दार्शनिक परम्पराएँ यह स्वीकार करती हैं कि समृद्धि का वास्तविक उद्देश्य मानव जीवन में संतुलन एवं कल्याण की स्थापना है। अद्वैत वेदान्त में बाह्य वैभव को मायिक माना गया, किन्तु जीवनोपयोगी साधनों की उपेक्षा भी स्वीकार नहीं की गई। इस संतुलित दृष्टिकोण में लक्ष्मी संसारगत आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाली शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित रहती है।

आधुनिक भारतीय चिंतन में लक्ष्मी की पुनर्व्याख्या

आधुनिक काल में भी लक्ष्मी की अवधारणा भारतीय सामाजिक एवं आर्थिक चिंतन में प्रासंगिक बनी हुई है। महात्मा गांधी ने अर्थव्यवस्था को नैतिकता से सम्बद्ध करते हुए 'ट्रस्टीशिप' का सिद्धान्त प्रतिपादित किया, जो वस्तुतः धर्माधारित लक्ष्मी की अवधारणा का आधुनिक रूप है। उनके अनुसार संपत्ति समाज की धरोहर है और उसका उपयोग लोककल्याण के लिए होना

चाहिए। इसी प्रकार आधुनिक भारतीय विचारकों ने आर्थिक विकास को सामाजिक न्याय तथा मानवीय गरिमा से जोड़ते हुए समृद्धि की व्यापक परिभाषा प्रस्तुत की।

समकालीन भारतीय समाज में लक्ष्मी का अर्थ केवल धनार्जन तक सीमित न रहकर शिक्षा, स्वास्थ्य, ज्ञान एवं मानवीय संसाधनों के विकास से भी सम्बद्ध हो गया है। यह परिवर्तन भारतीय वाङ्मय की उस मूल चेतना का विस्तार है जिसमें समृद्धि को बहुआयामी उन्नति के रूप में स्वीकार किया गया था।

समग्र निष्कर्ष

भारतीय वाङ्मय के सम्यक अध्ययन से यह स्पष्ट रूप से प्रतिपादित होता है कि लक्ष्मी की अवधारणा बहुआयामी एवं विकासशील रही है। वैदिक साहित्य में वह जीवन-पोषण एवं प्राकृतिक सम्पन्नता की शक्ति के रूप में प्रकट होती है, उपनिषदों में दार्शनिक अर्थ ग्रहण करती है, महाकाव्यों में धर्म एवं नैतिक शासन की सहचरी बनती है तथा पुराणों में विश्वसंरक्षण की दैवी शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित होती है। स्मृति एवं धर्मशास्त्रों में लक्ष्मी सामाजिक उत्तरदायित्व एवं न्यायपूर्ण अर्थव्यवस्था की प्रतीक बन जाती है, जबकि लोकपरम्परा में वह सांस्कृतिक चेतना एवं सामाजिक समन्वय का आधार बनती है।

इस प्रकार भारतीय परम्परा में लक्ष्मी का वास्तविक अर्थ धनसंचय न होकर धर्मसंयमित समृद्धि है। जहाँ सत्य, श्रम, न्याय एवं लोकमंगल की भावना विद्यमान रहती है, वहीं लक्ष्मी का स्थायी निवास संभव होता है। भारतीय वाङ्मय लक्ष्मी को भौतिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक उन्नति के समन्वित आदर्श के रूप में प्रस्तुत करता है, जो आज भी सामाजिक संतुलन एवं सांस्कृतिक निरन्तरता के लिए समान रूप से प्रासंगिक है।

संदर्भ सूची

ऋग्वेद संहिता, श्रीसूक्त, वैदिक साहित्य प्रकाशन।

अथर्ववेद संहिता, चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी।

शतपथ ब्राह्मण, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन।

तैत्तिरीय उपनिषद, गीताप्रेस, गोरखपुर।

वाल्मीकि रामायण, गीताप्रेस, गोरखपुर।

महाभारत, शांतिपर्व, भण्डारकर ओरिएण्टल रिसर्च इंस्टिट्यूट संस्करण।

विष्णु पुराण, गीताप्रेस, गोरखपुर।

श्रीमद्भागवत महापुराण, गीताप्रेस, गोरखपुर।

मनुस्मृति, कुल्लूकभट्ट टीका सहित संस्करण।

याज्ञवल्क्य स्मृति, चौखम्बा संस्कृत संस्थान।

राधाकृष्णन, एस., Indian Philosophy, Oxford University Press.

हाजरा, आर.सी., Studies in the Puranic Records on Hindu Rites and Customs।